भारतीय राष्ट्रवाद में पंडित जवाहर लाल नेहरू का योगदान

शोधार्थी

सुरेश चन्द्र शर्मा

राजनीति विज्ञान विभाग

राजस्थान विश्वविद्यालय, जपयुर

सार

आधुनिक भारत में कितने ही लोकप्रिय नेता हुए, किन्तु सामान्य जनता के हृदयों में जो व्यापक श्रद्धा और लोकप्रियता गांधी, नेहरू और तिलक को मिली वह सम्भवतः शायद ही किसी को मिली हो। किन्तु गांधी और तिलक की लोकप्रियता से नेहरू जी की लोकप्रियता में एक महान अन्तर है। गांधी और तिलक केवल नेता थे, प्रशासक नहीं। किन्तु नेहरू जी नेता के अतिरिक्त लम्बी अवधि तक प्रशासक भी रहे। स्वतन्त्रता के पश्चात् जटिल समय में इतनी लम्बी अवधि तक अनेक धर्मों, वर्गों और श्रेणियों के इस विशाल देश का, जहाँ विषमताओं की भरमार है और जहाँ भिन्न–भिन्न वर्गों के आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्वार्थ एक–दूसरे से टकराते रहते हैं, प्रशासन करते हुए भी नेहरू जी ने अपनी लोकप्रियता बरकरार रखी। नेहरू जी भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के उच्चतम नेताओं में से एक थे। वस्तुतः लोकप्रियता में उनका स्थान गांधी जी के बाद दूसरे नम्बर पर ही आता था, परन्तु इतना होते हुए भी उन्होंने राष्ट्रवाद के किसी सिद्धान्त को प्रतिपादित नहीं किया। उनके एक लेख 'भारत की एकता' में यह भासित होता है कि वह ऐसे सांस्कृतिक आधारों पर निर्मित भारत की वस्तुनिष्ठ एकता में विश्वास करते थे, जो संकुचित अर्थों में धार्मिक तत्वों से सम्बद्ध नहीं है। उनका विश्वास था कि अपनी समस्त विभिन्नताओं के बावजूद भी भारत में एकता की भावना सदैव विद्यमान रही है। उन्हें रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा प्रतिपादित संश्लेषित सर्वमुक्तिवाद में पूर्ण आस्था थी तथा राष्ट्रवाद के प्रति अपनाये गये उस धार्मिक दृष्टिकोण के साथ कोई लगाव नहीं था जिसका प्रतिपादन महर्षि दयानन्द, विपिन चन्द्र पाल और श्री अरविन्द के द्वारा हुआ था। परन्तु उन्हें इस बात को मानने से कोई आपत्ति नहीं थी कि राष्ट्रवाद के साथ कुछ भावनात्मक पहलू जुड़े हुए होते हैं। उन्होंने इस सम्बन्ध में एक स्थान पर लिखा है कि 'राष्ट्रवाद मूलतः भूतकालीन उपलब्धियों, परम्पराओं तथा अनुभवों की सामुदायिक स्मृति है और आज राष्ट्रवाद पहले की अपेक्षा कहीं अधिक शक्तिशाली है। जब भी किसी संकट का उदय हुआ है, राष्ट्रवाद का उदय हुआ है तथा लोगों को पुरानी परम्पराओं से शान्ति एवं शक्ति की प्राप्ति हुई है। आधुनिक युग की सबसे उल्लेखनीय उपलब्धि यह है हमने राष्ट्र के भूत की पुनः खोज कर ली है।'

नेहरू के राष्ट्रवाद संबंधी विचार

नेहरू एक प्रबल राष्ट्रवादी थे। राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में पण्डित नेहरू का मत है कि वास्तव में आधुनिक राष्ट्र की नीव झूठे तथा वाह्य दिखावे के ऊपर नहीं खड़ी हो सकती है। इसके फलस्वरूप भारत की आधारभूत एकता में नेहरू जी का गहरा विश्वास था। वे स्वीकार करते थे कि अनेक सांस्कृतिक भावनाओं और भौगोलिक विविधताओं के होते हुए भी भारत एक राष्ट्र था। उनकी मान्यता थी कि सांस्कृतिक बहुलता और विविधताओं के मध्य समन्वय की अतीत से चली आने वाली एक सतत् परम्परा एक राष्ट्र के रूप में भारत की पहचान का विशिष्ट लक्षण है।[1] नेहरू की राष्ट्र सम्बन्धी धारणा कार्ल मार्क्स से अनुप्रेरित थी। नेहरू जी मौलिक रूप से इस सत्य में विश्वास रखते थे कि सभ्यता का निर्माण आपसी सहयोग, सहनशीलता, परस्पर परिपक्व समझौते के आधार पर होता है।

पण्डित जवाहर लाल नेहरू के राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में नीरद सी चौधरी का मत है कि 'नेहरू का नेतृत्व भारत की एकता के पीछे की सबसे बड़ी नैतिक शक्ति है। वह सिर्फ कांग्रेस पार्टी के ही नेता नहीं हैं, बल्कि हिन्दुस्तान की जनता के नेता हैं और महात्मा गाँधी के सही उत्तराधिकारी हैं।" नेहरू जी ने अपने जीवन के बीस साल अपनी मातृभूमि को स्वतन्त्र करवाने में बलिदान कर दिये। उनके जीवन में उनका राष्ट्रवादी व्यक्तित्व सन् 1947 तक चलता रहा जब तक भारत विदेशियों से आजाद नहीं हो पाया। उनकी भारतीय राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद में पूर्ण आस्था थी। उन्हें अपने राष्ट्रवादी होने पर पूर्ण अभिमान था। उनके अनुसार किसी भी पराधीन देश के लिए राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्रथम और प्रधान आकांक्षा होनी चाहिए। भारत वर्ष के लिए, जिसके पास अतीत की एक धरोहर है, उसके लिए यह बात और भी अधिक सही है। अपनी राष्ट्रवादी भावनाओं के आधार पर ही उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य से टक्कर ली तथा भारतीय स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया।

मानवता के कल्याण में नेहरू भारत के कल्याण का भी दर्शन करते थे। नेहरू का विचार था कि राष्ट्रीयता परम्परागत शक्ति है जिसे प्रत्येक देशवासी स्वेच्छा से स्वीकार करता है। राष्ट्रवाद को नेहरू ने एक भावनात्मक वस्तु बताया और विश्वास प्रकट किया कि विदेशी शासन के दौरान राष्ट्रीयता की भावना अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है तथा राष्ट्रीय आन्दोलन को गतिशील बनाए रखने के लिए शक्तिशाली प्रेरणा का काम करती है। जब कभी किसी देश पर संकट उपस्थित होता है तो राष्ट्रवाद अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेता है। राष्ट्रवादी भावनाएँ नेहरू जी के भीतर विद्यालयावस्था से ही पैदा हो चुकी थी। उस समय बंग–भंग विरोधी आन्दोलन के समाचार उन्हें अत्याधिक उतेजित करते थे। नेहरू संयमवादी थे, लेकिन अत्यधिक भावुक और संवदेनशील होने के नाते उन्हें भारत माता के रोमांचपूर्ण आदर्श ने अत्यधिक प्रभावित किया। उनके लिए राष्ट्रवाद वास्तव में आत्मविस्तार का ही एक रूप था।[2]

नेहरू जी ने भारतीय इतिहास का अतिसूक्ष्मता के साथ गहन अध्ययन किया था। उनके अनुसार भारतीय इतिहास में आपसी फूट और साम्प्रदायिकता के विष के कारण ही भारत अपने प्राचीन गौरव को खो बैठा है। इस संबंध में वे कहते है कि ''राष्ट्रवाद स्वतः अतीत की उपलब्धियों, परम्पराओं और अनुभवों की स्मृति है और राष्ट्रवाद जितना शक्तिशाली आज है, उतना कभी नहीं था। जब कभी संकट आया है, तभी राष्ट्रवादी भावना का उत्थान भी हुआ है और लोगों ने अपनी परम्पराओं से शक्ति तथा सांत्वना प्राप्त करने का प्रयत्न किया है।[3] उनका विचार था कि राष्ट्रवाद एक भावनात्मक सम्बन्ध होता है जो विभिन्न वर्गों, जातियों, नस्लों के लोगों को आपस में जोड़े रखता है। नेहरू जी उन समस्त जातिगत, सम्प्रदायगत और धर्म पर आधारित संकीर्णताओं के ऊपर उठकर एक ऐसे राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे जो अपनी अन्तराष्ट्रीयता की भूमिका समुचित रूप से निभा सके, उनकी समस्त राजनैतिक परिकल्पनायें इसी भावना पर निर्भर हैं, उनका समाजवादी दृष्टिकोण, उनका गुटनिरपेक्षता का सिद्धान्त उनके द्वारा निरूपित आर्थिक व्यवस्था की संरचना– ये सभी राजनैतिक सिद्धान्त समानता और अन्तर्राष्ट्रीयता के आधार पर निर्भर हैं।[4]

जवाहर लाल नेहरू सामाजिक समानता के कट्टर परिपोषक थे, वे भारतीय समाज में व्याप्त जातिगत संकीर्णताओं के विरोधी थे और उनको समूल विनष्ट कर देना चाहते थे, वै वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले व्यक्ति थे और उनकी इतिहास दृष्टि अत्यन्त प्रखर थी, वे अच्छी तरह से जानते थे कि इन संकीर्णताओं के पीछे, वे सामाजिक और आर्थिक व्यवस्थायें हैं जो आधुनिक विश्व के सन्दर्भ में निरर्थक हो चुकी हैं, वे वर्णव्यवस्था के भी विरोधी थे और धर्म पर आधारित आस्थाओं पर सीधी चोट करते थे। नेहरू अपने राष्ट्रवाद के अन्तर्गत समाज के सभी वर्गों, जातियों तथा धर्मों के लोगों को सम्मिलित करना चाहते थे। उनका मानना था कि जब तक भारत की सामान्य जनता के अन्दर राष्ट्रीय अभिप्रेरणाएँ पैदा नहीं होगी, तक तक सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय आन्दोलन को सफलता की ओर नहीं ले जाया जा सकता है और यही कारण था कि राष्ट्रीय आन्दोलन में महात्मा गान्धी का नेतृत्व उन्हें मान्य तथा विश्वसनीय लगता था, क्योंकि गांधी ने भारतीय समाज के सभी वर्गों, जातियों,

धर्मों तथा सम्प्रदायों के लोगों को अपने राष्ट्रीय आन्दोलन में सम्मिलित किया था। गान्धी के नेतृत्व में कार्य करते हुए वह भारतीय किसानों, मजदूरों, विधार्थियों तथा जनता को राष्ट्रीय आन्दोलन में लाने में सफल रहे।[5]

भारतीय राष्ट्रवाद में नेहरू का योगदान

भारतीय राष्ट्रवाद में जवाहर लाल नेहरू का योगदान धीरे–धीरे बढ़ा। 1912 में सात वर्ष तक विदेश में रहने के बाद जब वे स्वदेष वापस आये तब सर्वप्रथम बांकीपुर में हुये कांग्रेस के अधिवेशन में सम्मिलित हुये किन्तु उदारवादियों के अतिषय आंग्ल–भक्ती से खिन्न हुये। उन्हे उस समय केवल गोपाल कृष्ण गोखले ने प्रभावित अवश्य किया किन्तु उनके 'भारत सेवक समाज' की नरम राजनीतिक दृष्टिकोण ने उन्हे उससे विमुख कर दिया। वे तिलक और एनीबेसेंट के होमरूल आन्दोलन से आकृष्ट हुये थे। गांधी जी से उनकी सर्व प्रथम भेंट लखनऊ कांग्रेस अधिवेशन में हुयी। नेहरू जी गांधी जी की चम्पारन में प्राप्त सफलता से बेहद प्रभावित हुये। नेहरू को उनमें एक ऐसे नेता के दर्शन हुये जो कि भारत में सत्याग्रह के नवीन अस्त्र का प्रयोग करने को उत्साहित था और उससे सफलता प्राप्त होने की आशा दिखाई देती थी। इस तरह नेहरू जी के लिये राष्ट्रीय आन्दोलन में गांधी प्रमुख प्रेरणा के स्रोत बने।

नेहरू जी निरन्तर अपनी श्रमशीलता, त्याग, अनुशासन, राष्ट्रीयता और अदम्य साहस तथा उच्च नैतिक व्यवहार एवं आचरण के कारण ही एक स्वाधीनता संग्राम सेनानी के रूप में अपने कृतित्व से न बल्कि देष के करोड़ो लोगों को राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने व भारत माता की मुक्ति हेतु प्रेरित किया, वरन् उनको प्रभावशाली दिशा प्रदान करते हुये, किये गये राष्ट्रीय आन्दोलन में जीत दर्ज करके, अपने विचारों, कार्यों एवं नेतृत्व क्षमता को हमेशा के लिए अमिट कर दिया। राजनैतिक दृष्टि से भारत 1912 के आखिर में बहुत कमजोर मालूम होता था, क्योंकि तिलक जी जेल में थे और उनके अलावा कोई प्रभावशाली नेता न होने से भारत की शांति भंग हो रही थी। सन् 1912 ई. में नेहरू जी भारत लौटे तथा इसी वर्ष उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लिया। इस प्रकार उनका भारतीय राष्ट्रवाद में योगदान प्रारम्भ हो गया।[6] उन्होंने निश्चय किया था कि अपने जीवन के अमूल्य समय में से आधा तो वकालत के पेशे में लगायेंगे तथा आधा समय राष्ट्र की सेवा में लगायेंगे। अंग्रेजों द्वारा देश में हो रहे अत्याचारों एवं दमनचक्रों को देखते हुए उनके मन में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की रूपरेखा तैयार करने का उत्साह पैदा हुआ। उनका लक्ष्य था कि देश में अंग्रेजी शासन के खिलाफ जबर्दस्त आन्दोलन हो और हमारा देश आजाद हो। उन्होंने इग्लैण्ड में अंग्रेजों को बहुत नजदीक से देखा था। उनकी साम्राज्यवादी मनोवृत्ति को भी भली–भाँति पहचानते थे। भारत में अंग्रेजी शासन के पिछले सौ वर्षों के अन्याय, अत्याचार एवं दमनचक्र को देखकर नेहरू जी का हृदय द्रवित हो गया तथा उन्होंने मन ही ब्रिटिश हुकूमत को जड़ से उखाड़कर फेंक देने का दृढ़ संकल्प किया।[7]

नेहरू जी जब विलायत से वापस लौटे, तो उस समय कांग्रेस नरम दल (मॉडरेट) वालों के हाथ में थी। वे बंगाल में होने वाले आन्दोलन के ढंग को देश के लिए अहितकर समझते थे। उनकी दृष्टि में भारतीयों को अंग्रेजों से सिफारिशों और अन्य नरम तरीकों द्वारा शासन में सुधार करने की माँग करनी चाहिए थी। यह तरीका नेहरू जी को बिल्कुल पसन्द नहीं था। वे राष्ट्रवाद के लिए अपने अधिकारों को हाथ पसार कर भिखारी की भाँति नहीं अपितु एक योद्धा की भाँति लेना चाहते थे। नेहरू जी के अनुसार तत्कालीन भारतीय राष्ट्रवाद का अर्थ विदेशी शासन के विरूद्ध उग्र रूप से आन्दोलन करना था। परन्तु नरम दल का वर्चस्व होने के कारण नेहरू की उग्रता कैसे साबित होती।[8] सन् 1916 के बाद नेहरू जी निरन्तर भारतीय राष्ट्रवाद के प्रति आगे बढ़ते गए। ब्रिटिश अधिकारियों को इस दमन चक्र की विभीषिका को देखकर श्रीमती एनीबेसेन्ट तथा लोकमान्य तिलक ने होमरूल लीग की स्थापना की। सन् 1918 में नेहरू जी को 'होमरूल लीग' का सचिव

नियुक्त किया गया।[9] राष्ट्रवाद के प्रति कार्य करते हुए नेहरू जी भारतीय जनता व किसानों के सम्पर्क में आए। उनकी स्थिति देखकर वे अत्यन्त दुःखी हुए तथा उनकी स्थिति सुधारने के लिए कार्य करना शुरू कर दिया।

सन् 1919 में नेहरू जी गाँधीजी द्वारा आयोजित 'सत्याग्रह सभा' से प्रभावित हुए जो कि अंग्रेजी सरकार के रौलट एक्ट तथा दूसरे दमनकारी कानूनों की अवज्ञा करने के लिए बनाई गयी थी। उन्होंने कहा कि "उलझन से निकलने का यही एक रास्ता था, एक सीधा तथा खुला ढंग जोकि सम्भवतः प्रभावशाली भी था।"[10] भारतीय राष्ट्रवाद में योगदान के लिए नेहरू जी की सक्रियता का प्रथम प्रमाण रौलेट एक्ट के विरोध में देखने को मिला। रौलेट एक्ट में प्रावधान था कि – किसी क्रान्तिकारी अपराध के सन्देह में किसी भी व्यक्ति को पुलिस पकड़ सकती थी इसमें व्यवस्था थी कि उसका मुकदमा खुली अदालत में न होकर बन्द कमरे में होगा। बिना वारंट किसी भी व्यक्ति को सन्देह होने पर गिरफ्तार किया जा सकेगा। रौलेट एक्ट का विरोध करने के लिये गांधी जी ने जो पद्धति अपनायी थी वह जवाहरलाल नेहरू के अनुसार प्रत्यक्ष तथा सम्भवतः प्रभावी थी।[11] इस प्रश्न पर नेहरू जी जेल जाने को तैयार थे, किन्तु स्वयं महात्मा गांधी ने उन्हें पिता के परामर्श के अनुसार चलने का परामर्श दिया था।[12] अमृतसर में जलियावाला बाग के हत्याकाण्ड और उसके बाद भी कई स्थानों पर सरकार के दमनकारी एवं लोगों की लाचारी को देखकर नेहरू जी उग्रवादी राष्ट्रवाद की ओर और अधिक खिंचे चले गए थे।[13]

अधिवेशन के अध्यक्ष लाला लाजपतराय के साथ सभी पुराने महारथियों ने गाँधी के इस असहयोग आन्दोलन के प्रस्ताव का विरोध किया क्योंकि उन्हें गाँधी की अहिंसात्मक असहयोग की योजना पसंद नहीं थी। किन्तु पं. नेहरु के पिता जी ही ऐसे थे, जिन्होंने उस समय गाँधी जी का साथ दिया। असहयोग आन्दोलन में नेहरू जी ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन जोरो से चला। नेहरू जी ने इसमें सम्पूर्ण रूप से भाग लिया। असहयोग आन्दोलन के सारे काल में नेहरू संयुक्त प्रान्त की कांग्रेस समिति के महासचिव रहे और इस नाते वे प्रान्त में आन्दोलन के प्रधान संचालक रहे। इस आन्दोलन में उनके साथ उनके पिता को भी गिरफ्तार कर लिया गया एवं 1923 तक लखनऊ जेल में रहे। यह गाँधी जी के सत्याग्रह का नैतिक तथा सदाचारिक पक्ष था। नेहरू ने अंहिसावाद को ही एकमात्र साधन न माना, परन्तु उन्हें विश्वास हो गया था कि भारतीय परम्पराओं की पृष्ठभूमि में इसी नीति का अनुसरण ही उचित है।[14]

सन् 1926 में पं. नेहरू ने यूरोप की यात्रा की। 1927 में वे सोबियत रूस की यात्रा पर गये तथा साम्यवादी दल के नेतृत्व में वहाँ जो नये समाज की रचना की जा रही थी, उसका अवलोकन किया तथा उससे वे प्रभावित भी हुए लेकिन अपनी लोकतांत्रिक अवधारणाओं के कारण वे साम्यवादी रंग में स्वयं को रंग नहीं सके। नेहरू जी लोकतंत्र में अपनी आस्था के फलस्वरूप समाजवादी समाज रचना के पक्षधर तो थे, लेकिन उसकी रचना लोकतांत्रिक साधनों के माध्यम से ही किये जाने को उचित मानते थे। इस तरह समाजवाद को स्वीकार करके भी उसके लोकतांत्रिक पक्ष पर जोर दिया। 1927 में ही वे बेल्जियम की राजधानी ब्रुसेल्स में आयोजित दलित देशों के सम्मेलन में कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए तथा वहाँ उन्हें उनकी समस्याओं को समझने का प्रत्यक्ष अवसर मिला।[15]

नेहरू जी उस समय कांग्रेस के प्रधान सचिव थे वे असहयोग आन्दोलन बन्द हो जाने से बहुत दुःखी हुए। वे इतने दुखी हुए कि 38 साल की उम्र तक उन्होंने किसी भी निश्चित विचारधारा का अनुसरण नहीं किया। "नेहरू के राजनीतिक चिन्तन में राष्ट्रवाद का महत्वपूर्ण स्थान था–समाजवाद ने राष्ट्रवाद के लिए ढाँचा तैयार किया, जिसे पहले अपनाया जा चुका था।"[16] उनके राष्ट्रवाद को नई दिशा मिली और उन्होंने भारतीय समस्याओं को संसार के विशाल संदर्भ में देखा। सन् 1927 में भारत लौटने पर नेहरू जी ने कांग्रेस के मद्रास अधिवेशन में भाग लिया तथा उसमें भारत की ब्रिटिश राज से पूर्ण स्वतंत्रता हेतु प्रस्ताव प्रस्तुत किया। कांग्रेस को भारत की पूर्ण स्वतंत्रता की माँग की ओर प्रवृत्ति करने में जवाहर लाल

नेहरू का यह प्रस्ताव उसकी नीति में एक निर्णायक मोड़ का प्रतीक था और इसमें पंडित नेहरू की भूमिका महत्वपूर्ण थी। वे कांग्रेस के नये उभार के प्रतीक बन गये।[17]

सन् 1928 ई. में साइमन कमीशन भारत आया। लखनऊ में नेहरू जी के नेतृत्व में साइमन कमीशन का विरोध किया गया। यह कमीशन जहाँ कही भी गया, सभा व जुलूस के द्वारा उसका बहिष्कार किया गया। इस नेतृत्व के दौरान पुलिस ने नेहरू जी व आन्दोलनकारियों पर लाठियाँ बरसायीं।[18] इसी वर्ष मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में राष्ट्रवादियों ने नेहरू समिति का गठन किया। इस गठन का उद्देश्य साइमन कमीशन एवं भारत सचिव लार्ड बरकिनहैड की उस चुनौती का जवाब देना था, जिसमें उन्होंने भारतवासियों से एक ऐसा संविधान बनाने के लिए कहा था जो भारत के सभी समुदायों को स्वीकार्य हो। मार्च, 1929 में जिन्ना ने अपनी मांगें मुस्लिम लीग के सामने प्रस्तुत की और नेहरू रिपोर्ट को पूरी तरह से अस्वीकार करने का सुझाव दिया। कांग्रेस ने अक्टूबर, 1929 को घोषणा की कि नेहरू रिपोर्ट की प्रमाणिकता को समाप्त कर दिया गया है। 1929 में कांग्रेस ने 'पूर्ण स्वराज्य' का अपना लक्ष्य का अधिवेशन लाहौर में घोषित किया। इसके अध्यक्ष नेहरू जी थे। इस अधिवेषन में भाषण देते हुए नेहरू जी ने कहा, "हमारा एक ही लक्ष्य है स्वाधीनता। स्वाधीनता का अर्थ है पूर्ण स्वतंत्रता"। 31 दिसम्बर, 1929 को रात के 12 बजे जवाहर लाल नेहरू ने रावी नदी के तट पर नवगृहीत तिरंगे झण्डे को फहराया। इसी अधिवेशन में 26 जनवरी, 1930 को 'प्रथम स्वाधीनता दिवस' के रूप में मनाने का निश्चय किया गया। इस दौरान नेहरू ने अध्यक्षीय अभिभाषण में घोषणा की ''मैं स्पष्ट रूप से यह स्वीकार करता हूँ कि मैं एक समाजवादी तथा एक गणतंत्रवादी हूँ, और मेरा राजाओं तथा महराजाओं में कोई विश्वास नही है और न ही मैं उस व्यवस्था में विश्वास करता हूँ जो कि उद्योग के उन आधुनिक राजाओं को जन्म देती है जो कि मनुष्य के भाग तथा जीवन पर पुराने जमाने के राजाओ से भी अधिक अधिकार रखते हैं और जो वैसी ही लूट मचाते है जैसे कि सामन्तगण मचाते थे।'' उन्होंने आगे कहा 'राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिये किसी भी महान आन्दोलन को संगठित विद्रोह की स्थिति को छोड़कर आवश्यक रूप से शांतिपूर्ण होना चाहिए।[19] अंग्रेजी सरकार ने भारत में, लोगों को केवल स्वतंत्रता से ही वंचित नहीं किया। अपितु लोगों के शोषण को आधार मानकर भारत को आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टि से बर्बाद कर दिया है।[20]

सन् 1930 में गाँधी जी ने नमक का कानून तोड़ने के इरादे से सविनय अवज्ञा आन्दोलन का अभियान चलाया। इस आन्दोलन में भाग लेने की वजह से नेहरू जी को अप्रैल, 1930 में गिरफ्तार कर लिया गया जो कि जनवरी 1931 तक जेल में रहे। नेहरू जी ने कार्यकारिणी समिति को मौलिक अधिकारों तथा आर्थिक नीति के बारे में सावधानी से पास किए गए समाजवादी प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने के लिए प्रेरित किया। इनके द्वारा स्वतंत्र तथा समान समाज की नींव डाली गयी। यह नेहरू का देर का स्वप्न था जोकि 19 साल के बाद स्वतंत्र भारत के संविधान द्वारा पूरा हुआ। इंग्लैण्ड में गोलमेज सम्मेलनों की असफलता और भूमि सुधार सम्बन्धी आन्दोलन की वजह से नेहरू जी फरवरी, 1934 तक जेल में रहे परन्तु उनकी पत्नी की बीमारी के कारण सितम्बर 1935 में उन्हें रिहा कर दिया गया। नेहरू ने इस कानून को ''दासता तथा दमन का राजपत्र कहा जिसके द्वारा ब्रेक तो लगा दिया गया, परन्तु इंजन कही नही था।''[21] भारतीय जनता ने अंग्रेजी हुकुमत को अब और न सहने का दृढ़ निश्चय किया। नेहरू जी भी पूर्ण स्वतंत्रता के अतिरिक्त कोई अन्य समझौता करने के लिए तैयार न थे। नेहरू जी गांधी द्वारा चलाये गये सविनय अवज्ञा आन्दोलन सहमत नही थे, किन्तु फिर भी वे उनकी समस्त नीतियों का सम्मान करते थे। 1935 का अधिनियम भी नेहरू जी को मान्य न था क्योंकि वे पूर्ण स्वतंत्रता चाहते थे।[22]

14 जुलाई, 1942 ई. को वर्धा में कांग्रेस की कार्य समिति ने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' का प्रस्ताव पारित किया। इस प्रस्ताव में कहा गया था कि भारत में ब्रिटिश शासन का तुरन्त अन्त होना चाहिए। यह भारत तथा मित्र देशों की सफलता के लिए आवश्यक है।[23] इस आन्दोलन में नेहरू जी ने भी भाग लिया। इसी अवसर पर उन्होंने कहा, "हमने स्वयं को अग्नि में धकेल

दिया है, या तो हम सफलतापूर्वक इससे बाहर निकल आएंगे अथवा इसी में समाप्त हो जायेंगे।" गाँधी जी ने देशवासियों को "करो या मरो' का संदेश दिया। इसके फलस्वरूप सरकार द्वारा गाँधी, नेहरू, सहित कांग्रेस के सभी शीर्षस्थ नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया तथा गाँधी जी को बम्बई के आगाखां पैलेस में तथा नेहरू आदि नेताओं को अहमद नगर जेल में बन्द कर दिया गया लेकिन इनकी अनुपस्थिति में भी कांग्रेस के युवा नेताओं द्वारा 'भारत छोड़ो आन्दोलन' को पुरजोर तरीके से संचालित किया गया।

जून 1945 में नेहरू की रिहाई के पश्चात् भारत अपने सम्पूर्ण स्वतंत्रता के लक्ष्य की ओर तेजी से बढ़ने लगा। नेहरू को अगस्त, 1946 में फिर कांग्रेस का अध्यक्ष चुन लिया गया। अगस्त, 1946 में लार्ड वेवेल ने नेहरू को अन्तरिम सरकार का निर्माण करने का निमंत्रण दिया। नेहरू देश के विभाजन तक अन्तरिम सरकार के मुखिया के रूप में काम करते रहे। 1946 के अन्त में चुनाव करवाए गए और एक संविधान सभा का निर्माण किया गया। मार्च 1947 में लार्ड माउंटबेटन को भारत का गर्वनर–जनरल बनाकर भेजा गया और ब्रिटेन की मजदूर सरकार ने उन्हें छः महीनों के अन्दर शक्ति के हस्तान्तरण के लिए कहा। उसने देश को 'भारत' तथा 'पाकिस्तान' दो राष्ट्रों में विभाजित करने का प्रस्ताव रखा। नेहरू ने बहुत दुःखी होकर इस योजना को अथवा वास्तव में जिन्ना के दो–राष्ट्र सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया।[24]

15 अगस्त, 1947 को भारत ने अपनी आजादी हासिल की। भारत के स्वतंत्र होने पर नेहरू जी को स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री बनने का सौभाग्य मिला। वे 27 मई, 1964 तक इस पद पर कार्य करते रहे। 27 मई, 1964 ई. को भारत के इस सपूत का देहावसान हो गया। उनकी मृत्यु पर राधाकृष्णन् ने कहा था, "पं. नेहरू की मृत्यु से देश का एक युग समाप्त हो गया है। पं0 नेहरू का जीवन अन्नतसेवा और समर्पण का जीवन था। वे हमारी पीढ़ी के महानतम् व्यक्ति थे। वे एक ऐसे अद्वितीय राजनीतिज्ञ थे, जिनकी मानव जाति के प्रति सेवाएं सदा स्मरण रहेंगी।" पं. जवाहर लाल नेहरू अपार राष्ट्रवादी थे। उनका कहना था, "हिन्दुस्तान मेरे खून में समाया हुआ है और उसमें बहुत कुछ ऐसी बातें हैं जो मुझे स्वभावतः उकसाती हैं।"[25]

पं. जवाहर लाल नेहरू ने सदैव धर्म व राष्ट्रवाद का विरोध किया। उनका कहना था "मैं किसी धर्म या मत से जकड़ा हुआ नहीं हूँ, किन्तु मैं मनुष्य की प्राकृतिक नैतिकता पर पूरा विश्वास रखता हूँ, यह कोई धर्म हो या न हों, मैं व्यक्ति की गरिमा में विश्वास करता हूँ, मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर मिले, मुझे ऐसे समाज में पूरा विश्वास है, जिसमें अधिक भिन्नता न हो, मुझे धनी व्यक्तियों की बेहूदगी और गरीबों की दरिद्रता अच्छी नहीं लगती।"[26]

नेहरू जी समाजवादी विचारधारा के व्यक्ति थे। स्वतंत्र भारत में अपनी नीतियों के द्वारा उन्होंने देश में ठोस लोकतांत्रिक परम्परा की स्थापना की और राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने कार्यों एवं नेतृत्व क्षमता से जन मानस को न केवल राष्ट्र की मुक्ति के लिये प्रयत्न हेतु प्रेरित किया, वरन् उनको प्रभावशाली दिशा प्रदान की, जो स्वतंत्रता आन्दोलन में महती भूमिका अदा किया। वे विश्व के महानतम् व्यक्ति थे और ऐसे अद्वितीय राजनीतिक थे जिनकी मानव मुक्ति के प्रति सेवाएं चिरस्मरणीय है। राधाकृष्णनन् ने उनके विषय में लिखा है, "स्वाधीनता संग्राम के योद्वा के रूप में वे यशस्वी थे और आधुनिक भारत के निर्माण के लिए उनका योगदान अभूतपूर्व था।"

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नेहरू की राष्ट्रवादिता पर किसी भी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता वे एक निश्छल राष्ट्रभक्त थे तथा निश्छल भाव से उन्होंने देश की सेवा की तथा उसके आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक सौहार्द्रता, राष्ट्ररक्षा के लिए सभी प्रकार के कदम उठाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ रखी। उनका मानना था कि यदि राष्ट्रवाद को

संयमित रूप से अपनाया जाय तो यह विश्व की अनेक समस्याओं को सुलझाने में बहुत अधिक सीमा तक सहायक सिद्ध हो सकता है। अनेक विचारकों का भी मानना है कि राष्ट्रीयता व्यक्ति को मानवता से मिलाने वाली एक कड़ी है।

संदर्भ सूची

1 एम० कुमार, दीप्ति शर्मा, जवाहर लाल नेहरू, अर्जुन पब्लिषिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2011, पृ० 82

2 वी०पी० वर्मा, आधुनिक भारतीय विचारक, एषिया पब्लिषिंग हाऊस, दिल्ली, 1980, पृ० 383

3 जवाहर लाल नेहरू, दी डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, दी सिगनैट प्रैस, कलकत्ता, 1946, पृ० 455

4 अम्बादत पंत, जवाहर लाल नेहरू : कांग्रेस और किसान, राजा अवधेष सिंह मेमोरियल एजुकेषन, काला कांकर, 1990, पृ० 34

5 वही, पृ० 35

6 मित्तल, ए.के., भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास, साहित्य भवन – पब्लिकेशन्स, आगरा, संस्करण 2012, पृष्ठ 303

7 सिंह, प्रेमलाल, सिंह सुधा, भारत की महान विभूतियाँ (गाँधी–नेहरू– शास्त्री–इंदिरा–राजीव–सोनिया) तक्षशिला प्रकाशन 98–ए–हिन्दी पार्क, दरियागंज, नई दिल्ली 110002 प्रथम संस्करण, 2005 पृष्ठ 57

8 वही, पृष्ठ 58

9 मित्तल, ए.के., पूर्वोक्त, पृष्ठ 303

10 Nehru, J.L., Op. Cit., P. 41

11 सूद, ज्योति प्रसाद : आधुनिक भारतीय सामाजिक तथा राजनैतिक विचार की मुख्य धारायें खण्ड 3, कं0 नाथ एंड कम्पनी मेरठ, पृष्ठ 14

12 वही, पृष्ठ 14

13 रहबर, हंसराज, नेहरू बेनकाब, साक्षी प्रकाशन एस–16 नवीन शहादरा, दिल्ली–110032 संस्करणः 2012 पृष्ठ 31

14 उपाध्याय, हरिभाऊ, जवाहर लाल नेहरू, अनुवादक 'मेरी कहानी' (संक्षिप्त) सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन संस्करण, 2012 पृष्ठ 40

15 मेहता, जीवन, भारतीय राजनीतिक चिन्तक एस.वी.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस आगरा संस्करण, 2013 पृष्ठ 273

16 D.E., Smith, I. Nehru & Democracy, P. 15

17 मेहता, जीवन, पूर्वोक्त, पृष्ठ 274

18 मित्तल, ए.के., पूर्वोक्त, पृष्ठ 303

19 सूद, ज्योति प्रसाद : आधुनिक भारतीय सामाजिक तथा राजनैतिक विचार की मुख्य धारायें खण्ड 3, कं0 नाथ एंड कम्पनी मेरठ, पृष्ठ 156

20 जैन, पुखराज, राष्ट्रीय आन्दोलन एवं भारत का संविधान, एस0वी0पी0डी0 पब्लिशिंग हाउस आगरा 282002 संस्करण, 2012–13 पृष्ठ 43

21 त्यागी, पी.के., भारतीय राजनीतिक विचारक भाग–2, विश्व भारतीय पब्लिकेशन्स नई दिल्ली–110002 प्रथम संस्करण, 2006 पृष्ठ 506

22 मित्तल, ए.के., पूर्वोक्त, पृष्ठ 304

23 मित्तल, ए.के., पूर्वोक्त, पृष्ठ 234

24 त्यागी, पी.के., पूर्वोक्त, पृष्ठ 509–510

25 जोशी, एम.सी., गाँधी, नेहरू टैगोर और अम्बेडकर (दि डिसकवरी ऑफ इण्डिया) अभिव्यक्ति प्रकाशन बी–31, गोविन्दपुर कालोनी, इलाहाबाद–211004, पुनर्मुद्रणः 2006 पृष्ठ 74

26 वही, पृष्ठ 76